शिक्षा पर बहुत ध्यान दिया। महिलाओं को समाज में सही स्थान दिलाने के लिए वे सदैव प्रयत्नशील रहीं। वे स्वतन्त्रता सेनानी भी थी और शिक्षिका भी थी। छायावादी काव्य उनकी विद्या भी, यथार्थ से पलायन नहीं। महादेवी वर्मा जी दृढ़ निश्चयी योद्धा की भांति जीवन संघर्ष करती रहना चाहती हैं। जीवन की इस अनोखी कारा के कोहरे से भरे वातावरण में ही तो परम सत्य की चिदानन्द ज्योति के दर्शन होते हैं, और एक समय तो ऐसा भी आता है जब वे सभी विषमताओं से ऊपर उठकर उस परम सत्य के दिव्य संदेश को जन-जन तक पहुँचा देती है -

"विरह का युग आज दीखा मिलनी के लघु पल सरीखा,
दु:ख-सुख में कौन तीखा, मैं न जानी औ न सीखा।
मधुर मुझकों हो गये सब मधुर प्रिय की भावना लें।"

महादेवी वर्मा जी की जीवन पथ-यात्रा में पंथ ही इनका साथी है और वेदना की साधनात्मकता, सजगता तथा जीवन के संकल्पों का समन्वय ही उत्साह, साहस और कर्म-प्रेरणा का आवेगमय उन्मेष बनता है। विरह रूपी कमल पुष्प के इस जीवन मूल में जल ही है और नयन पात्र भी इसी से आपूरित है और महादेवी वर्मा जी कहती हैं कि आध्यात्मिक और भावात्मक प्रतीकों का बाहुल्य महादेवी वर्मा की सूक्ष्म और गहन कल्पना शक्ति का तो परिचायक है ही उनकी मनोवैज्ञानिक पकड़ को भी वह स्पष्ट करता है। लौकिक प्रतीकों से वे अलौकिक को व्यक्त कर देती हैं। अपने काव्य संग्रहों के शीर्षक भी महादेवी वर्मा ने प्रतीकात्मक ही रखे हैं। जैसे कि 'नीहार'-नैराश्यपूर्ण वातावरण का प्रतीक है। 'रश्मि' आशा, उल्लास का प्रतीक है। 'नीरजा' सूर्य अर्थात् परमतत्त्व की ओर उन्मुख रहने वाली आत्मा का प्रतीक है। 'सांध्यगीत' साधन के विकास और आस्था का प्रतीक है। तथा 'दीपशिखा' विरह रूपी रात्रि को झेलती एवं साधना प्रारम्भ करती आत्मा का प्रतीक है। उनके 'दीपक' प्रतीक से जलन, पीड़ा, वेदना का अर्थ मात्र ही स्पष्ट नहीं होता अपितु स्वयं जलकर संसार को प्रकाशवान बना देने का अर्थ भी प्रसारित होता है और उन्होंने करूणा एवं वेदना को दूसरे ढ़ंग से परिभाषित किया—

"मधुर-मधुर मेरे दीपक जल
युग-युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल
प्रियतम का पथ आलोकित कर
विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात।
वेदना में कर जन्म करूणा में मिला आवास
अश्रु चुनता दिवस इसका अश्रु गिनती रात।।

महादेवी के गीतों में जीवन रूपी नदी के सुख, दु:ख रूपी दो किनारों के बीच निरंतर बहते हुए परम आनंद के महासागर में मिल जाने का आभास होता है। संयोग और वियोग में दुख और आनंद का जो अनूठा सत्य है वह इस संवेदनशील मानव हृदय को इस संसार के अविच्छिन्न को न छोड़ने का हठ 'शाश्वत पिपासा' बनाए रखता है। महादेवी वर्मा ने जीवन के इसी गूढ़ तथा गहन रहस्य से वेदना के आनंद में साक्षात्कार किया तथा उसे काव्य संसार के पावन बंधनों में जकड़ दिया और कहती हैं कि—

"चिर मिलन-विरह-पुलिनों की सरिता हो मेरा जीवन
।
प्रतिफल होता रहता हो युग फूलों का आलिंगन ।।"

अंततः कह जा सकता है कि महादेवी वर्मा जी की वेदना में निराशा के तो कहीं दर्शन होते ही नहीं, आशावादिता ही सर्वत्र दिखायी पड़ती है। यही आशावादिता ही प्रिय से मिलने की आतुरता को और अधिक बढ़ाती है तथा उस आतुरता से आनंद की अनुभूति कराती है। महादेवी जी अपनी वेदना और दुख के अंतस् में भी सर्वजन के सुख का अनुभव करती हैं। महादेवी वर्मा जी वेदना की प्रतिमूर्ति हैं और आधुनिक 'मीरा' भी।

डॉ. शिवप्रसाद सिंह के उपन्यास '*औरत* ' में ग्राम-चित्रण

डॉ. पी. एम. आर. जयंती,
व्याख्याता – हिन्दी
एस.के.आर. गवर्नमेंट डिग्री कॉलेज फॉर वुमेन (ए), नागराजुपेट, (कडप्पा)

सारांश- डा. शिवप्रसाद सिंह आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं, जिनका कथा-सृजन मुख्यतः ग्रामीण जीवन और उसके यथार्थ पर केंद्रित है। उनके उपन्यासों में सामाजिक विषमता, शोषण, बेरोज़गारी, स्त्री की विवशता और संघर्ष का मार्मिक चित्रण मिलता है। 'औरत' उपन्यास (1992) विशेष रूप से ग्रामीण नारी-जीवन की पीड़ा का दस्तावेज़ है। इसमें नायिका सोनवां सहित कई महिला पात्रों के माध्यम से स्त्री पर होने वाले शोषण, अत्याचार और सामाजिक रूढ़ियों का उद्घाटन किया गया है। सोनवां का जीवन ज़मींदारी अत्याचार का शिकार होकर त्रासद अंत पाता है, वहीं प्रतिभा बंसल, चंद्रा, रूपवां और सुखिया जैसे पात्र स्त्री की अलग-अलग स्थितियों और संघर्षों को सामने लाते हैं। 'औरत' का नामकरण अत्यंत सार्थक है क्योंकि इसमें स्त्री के विविध रूपों—शोषिता, संघर्षशील और आत्मनिर्भर—का यथार्थ अंकन किया गया है। इस प्रकार यह उपन्यास न केवल ग्रामीण महिला जीवन का चित्र प्रस्तुत करता है बल्कि समाज सुधार और नारी-जागरण का सशक्त संदेश भी देता है।

बीज वाक्य- डा. शिवप्रसाद सिंह का उपन्यास 'औरत' ग्रामीण नारी-जीवन की विवशता, संघर्ष और यथार्थ का जीवंत दस्तावेज़ है।

डा. शिवप्रसाद सिंह आधुनिक हिन्दी साहित्य के एक प्रतिष्ठित और सशक्त साहित्यकार हैं। उनके कथा-सृजन का मूल क्षेत्र ग्रामीण जीवन है। गौरव-प्राप्त साहित्यकार डॉ. शिवप्रसाद सिंह का जन्म 19 अगस्त 1928 ई. को उत्तर प्रदेश के काशीनगर स्थित जलालपुर गाँव में एक मध्यमवर्गीय कृषक परिवार में हुआ। इनके पिताजी का नाम श्री चंद्रिका प्रसाद सिंह तथा माताजी का नाम श्रीमती कुमारी देवी था। आप परिवार के ज्येष्ठ पुत्र थे।

शैक्षणिक उपलब्धियों में भी डॉ. सिंह ने उल्लेखनीय सफलता अर्जित की। उन्होंने सन 1947 में हाई स्कूल प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया। तत्पश्चात 1951 में काशी हिन्द विश्वविद्यालय से बी.ए. द्वितीय श्रेणी में तथा 1953 में एम.ए. प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया। आगे चलकर 1957 में उन्होंने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

आपको काशी हिन्द विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक पद पर नियुक्त किया गया और वर्ष 1967 में आप रीडर के पद पर आसीन हुए।

डॉ. शिवप्रसाद सिंह के कृतित्व में ग्रामीण चित्रण- डॉ. शिवप्रसाद सिंह पचासोत्तर हिन्दी साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर हैं। वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार हैं। 'कर्मनाशा की हार' सन् 1958 में प्रकाशित हुआ। इसमें गाँव के दीनहीन और निम्न वर्गों का जमींदारी वर्ग द्वारा किया गया शोषण का सजीव चित्रण मिलता है।

'इन्हें भी इंतजार है' 1961 में प्रकाशित हुआ। इसमें भारतीय अभिशप्त नारी का मार्मिक चित्रण है। 'मुरदासराय' 1966 में प्रकाशित हुआ। इसमें समाज और व्यक्ति के बीच का संघर्ष, प्रेम-संबंधों की टूटन, हिन्दू-मुसलमान सम्प्रदायों की एकता, समाज की निम्नवर्गीय नारियों का शोषण, बेरोज़गारी, आर्थिक और पारिवारिक संबंधों का सहज एवं सजीव चित्रण मिलता है।'अंधेरा हँसता है' 1975 में प्रकाशित हुआ। इसमें आम आदमी की ज़िन्दगी का चित्रण बहुत ही सफलतापूर्वक किया गया है।

सन् 1977 में प्रकाशित **'भेड़िए'** में नग्न जमींदारी वर्ग के शोषण तथा नारी-शोषण का मर्मस्पर्शी चित्रण मिलता है। डॉ. शिवप्रसाद सिंह का पहला उपन्यास सन् 1967 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास विभिन्न ग्रामीण समस्याओं का दस्तावेज़ होने के कारण *ग्रामात्मा की खोज* भी कहा गया। **'अलग-अलग वैतरणी'** अपने नाम के अनुरूप समाज के विभिन्न वर्गों की चेतना तथा गाँव की त्रासदी का व्यापक चित्रण प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास चिर-आदिम और स्वतंत्रकारी नगर की संस्कृति को केंद्र में रखकर लिखा गया है।'औरत' उपन्यास**'औरत'** उपन्यास सन् 1992 में प्रकाशित हुआ। यह मूलतः नारी-प्रधान उपन्यास है। इसमें ग्रामीण नारियों पर होने वाले विभिन्न अत्याचारों का सजीव चित्रण किया गया है। सचमुच यह उपन्यास ग्रामीण नारियों के जीवन का दस्तावेज़ है।

हिन्दी उपन्यासों में ग्रामीण महिला की परंपरा-नागार्जुन का उपन्यास **'रतिनाथ की चाची'** सन् 1948 में प्रकाशित हुआ था। इसमें विधवा नारी की विवशता, मन की व्यथा तथा अनमेल विवाह के विपरीत परिणामों का सजीव चित्रण मिलता है।

'नई पौध' का प्रकाशन सन् 1953 में हुआ था। इसमें समाज की कुप्रथाओं का विनाश तथा प्राचीन और नवीन मूल्यों का संघर्ष चित्रित है।

फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास **'मैला आँचल'** में धर्म की आड़ में साधु -सन्यासियों द्वारा किए जाने वाले अनैतिक कार्यों का भंडाफोड़ किया गया है तथा ग्रामीण समस्याओं का यथार्थ अंकन मिलता है। रेणु का ही उपन्यास **'परती परिकथा'** ग्रामीण समाज के वर्ग-संघर्ष और जीवन बाबू व ताजमनी की प्रेमकहानी का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करता है।

भैरवप्रसाद गुप्त के उपन्यास **'सत्ती मैया चौरा'** में धन की शोषण-शक्ति, स्त्रियों की असहायता और सामंती व्यवस्था का चित्रण किया गया है।

रांगेय राघव के उपन्यास **'कब तक पुकारूँ'** में युगों से पीड़ित, उपेक्षित एवं शोषित निम्न वर्गीय मानव-मन की करुण पुकार अभिव्यक्त हुई है।

'जल टूटता हुआ' उपन्यास में **मिश्र जी** ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के ग्रामीण जीवन का यथार्थ चित्रण किया है।

ग्रामीण महिला और उसका परिवेश-भारत गाँवों का देश है। गाँव भारतीय समाज की केंद्रीय इकाई है। आज भी देश की लगभग **80.9% जनसंख्या गाँवों में निवास करती है**। ग्रामीण समुदाय और नारी एक-दूसरे के आश्रित एवं पूरक रहे हैं। नारी ग्रामीण समाज की महत्वपूर्ण इकाई है। नारी-जीवन में परिवार का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। गाँवों में महिलाएँ श्रम करती हैं, परंतु उनके श्रम के बदले उन्हें उचित मजदूरी नहीं मिलती, जिससे उनके भीतर असंतोष की भावना व्याप्त रहती है।

कृषि-आधारित जीवन ग्रामीण महिला की प्रमुख विशेषता है। शिक्षा नारी-जीवन का आवश्यक अंग है, क्योंकि यह नारी को पूर्णता प्रदान कर उसके व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करती है। नारी शिक्षा गाँवों में विद्यमान बुराइयों, बीमारियों, बेरोज़गारी और गंदगी से मुक्ति दिलाकर सामाजिक सुरक्षा प्रदान करती है। महिलाओं की **सुदृढ़ता एवं स्वावलंबन** पर ही देश का भविष्य निर्भर है। लेकिन गाँवों में विद्यमान निराशा एवं पलायन की प्रवृत्ति यह सोचने के लिए बाध्य करती है कि ग्रामीण महिला का भविष्य क्या होगा? क्या ग्रामीण महिला इसी प्रकार निराशा और मायूसी से ग्रसित होकर टूटती रहेगी?

डा. शिवप्रसाद सिंह के उपन्यास 'औरत' की कथा वस्तु : उपन्यास का प्रारंभ शिवेंद्र और प्रेमस्वरुप के बार्तालाप से होता है। उपन्यास की नायिका सोनवां शिवेंद्र की बचपन की साथी थी और दोनों एक दूसरे से प्यार करते थे। शिवेंद्र पढ़ने के लिए शहर चला जाता है। सोनवाँ रोपनी वाली मजूरिनों को मों के बराबर मज़दूरी दिलाने के लिए जो भूख- हडताल करती है उससे डरकर गाँव के मुखिया, जमींदार सुवर्णराय ने सोनवां को गोद लेने की बात कहता है। उसे अपने घर ले जाता है और उसके साथ बलात्कार करता है। फलत: वह गर्भवती हो जाती है। पूरे गाँव के लोग यही मानते हैं कि उसके पेट में जो -बच्चा है वह शिवेन्दर का है। सोनवां का भाई शोभुनाथ उस बच्चे को सवर्णराय का जानकर उससे घृणा करने लगता है। सोनवां दुखी होकर ज़हर खाकर सारा मामला शिवेंद्र से कहती है और उसी के गोद में मर भी जाती है। सानवा के अतिरिक्त उपन्यास में अनेक महिला पात्र हैं जिनमें पुलिस अफसर प्रतिभा बंसल उल्लेखनीय है। उसने एक युवक से प्रेम किया, परंतु युवक का मानना था कि घर से बाहर काम करने वाली हर लड़की चरित्रहीन होती है। इसी कारण उसने प्रतिभा से विवाह नहीं किया। जबकि आज के परिवेश में स्त्री और पुरुष दोनों के नौकरी करने से ही परिवार सुखपूर्वक जीवन बिता सकते हैं।

उपन्यास में सुखिया चमारिन पर सुदर्शन तिवारी अत्याचार करता है। इस पर पुलिस अफसर प्रतिभा बंसल कहती है कि गरीब की गाय को सब दुहना चाहते हैं और कमजोर को सभी सताते हैं। ग्रामीण नारी अशिक्षित और भोली होती है, इसलिए जितने भी अन्याय और अत्याचार होते हैं, वे प्रायः उन्हीं के साथ घटित होते हैं। अतः उन्हें भी पढ़-लिखकर सभ्य होना आवश्यक है और अपनी रक्षा करना सीख लेना चाहिए।

एक अन्य पात्र चंद्रा, बी.ए. पास करने के पश्चात नौकरी करना चाहती है, परंतु नौकरी नहीं कर पाती। उस समय के समाज में उच्चवर्गों की बहुओं का घर से बाहर जाना परंपरा के विरुद्ध माना जाता था। साथ ही वह विधवा भी है, और विधवा का नौकरी करना, बाहर जाना, लोगों से मिलना निषिद्ध समझा जाता था। इस प्रकार उपन्यास के बहुत कम पात्र ही शिक्षित हैं और नौकरी में लगे हैं। इनके अलावा अन्य पात्र जैसे—रोशन, सुखिया चमारिन, रुपवां तेतरी, जिरवा आदि अशिक्षित हैं और उनकी अज्ञानता के कारण उनका शोषण किया जाता है।

'औरत' नामकरण की सार्थकता-संसार की हर एक वस्तु किसी न किसी नाम विशेष से विभूषित होती है, होनी भी चाहिए। नाम से आकर्षित होकर ही पाठक उपन्यास को पढ़ने के लिए उत्सुक होते हैं। समीक्ष्य उपन्यास *'औरत'* अपने आप में एक सार्थक नामकरण का वाहक है। उपन्यास *'औरत'* में नारी जीवन के अनेक उतार-चढ़ावों का मार्मिक चित्रण मिलता है और एक स्पष्ट चित्र हमारे सामने उभरकर आता है। उपन्यास के प्रारंभ में सोनवां आर्थिक विषमता के कारण सुवर्ण राय को अपना धर्मपिता मान लेती है, किंतु वह उससे बलात्कार करके उसे अपनी रखैल बना लेता है। फलस्वरूप वह गर्भवती हो जाती है और अंततः जहर खाकर मर जाती है।

रूपवां समाजहित के कार्यों में निरंतर संलग्न रहती है और उसी में अपने प्राणों का बलिदान कर देती है। रोशन उस समय की प्रतीक बनकर सामने आती है और चंद्रा आधुनिक महिला का प्रतिरूप मानी जा सकती है। इस प्रकार, शिवप्रसाद सिंह ने अपने उपन्यास में नारी को विविध रूपों और भूमिकाओं में चित्रित कर उसके जीवन को उभारने का प्रयास किया है। कथा-संगठन, संदेश और शिल्प की दृष्टियों से विवेच्य उपन्यास एक सशक्त कृति सिद्ध होती है।

****

संदर्भ

1. सिंह, शिवप्रसाद. *औरत*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण।
2. मिश्र, नामवर. *हिंदी उपन्यास और समाज*. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन, 1980।
3. सिंह, रामविलास. *हिंदी साहित्य का इतिहास*. दिल्ली: ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1992।
4. तिवारी, मृदुला. *हिंदी उपन्यासों में नारी-चित्रण*. वाराणसी: साहित्य भवन, 2001।